ISSN: 2393-8900 IMPACT FACTOR : 2.7825(UIF) VOLUME - 9 | ISSUE - 10 | JUNE - 2023

HISTORICITY RESEARCH JOURNAL

"बौद्ध दर्शन के नैतिक एवं सामाजिक सिद्धान्त"

डॉ. सुनीता पन्दो
अतिथि अध्यापक,
(महिला अध्ययन विभाग)
बरकतुल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल .

शोध सारांश :–

महात्मा गौतम बुद्ध जी का जन्म नेपाल के लुम्बिनी वन में ईसा पूर्व 563 को हुआ। रिसर्च के अनुसार दुनिया में सर्वाधिक प्रवचनबुद्ध के ही रहे है। यह रिकार्ड है कि बुद्ध ने जितना कहा और जितना समझाया उतना किसी और ने नहीं। धरती पर अभी तक ऐसा कोई नहीं हुआ जो बुद्ध के बराबर प्रवचन कहे गये हो एवं प्रवचन किये हो। जी हाँ आश्चर्य यह है कि उनमें कही भी दोहराया नहीं है बुद्ध ने अपने जीवन में कही भी सर्वाधिक उपदेश कौशल देश की राजधानी श्राबस्ती में दिए थे एवं मगध को अपना प्रचार केन्द्र बनाया महात्मा बुद्ध जी करूणा एवं महाकरूणा मानव व्यक्तित्व के रूप में नैतिकता का उत्कृष्टतम रूप है यह सभी नियमों का सार है। यही कारण है कि बुद्ध का व्यक्तित्व जितना महान है, उनकी करूणा भी उतनी ही महान थी। करूणा से प्रेरित होकर ही बुद्ध ने लोक कल्याणकारी धर्म का उपदेश दिया, जिसमें बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय का मानवतावादी आदर्श निहित है। बुद्ध जी बौद्ध दर्शन के नैतिक एवं सामाजिक सिद्धान्त का वर्णन–निम्नानुसार दर्शाया गया है :–

1. अहिंसा (प्राणातिपात विरति) :– बौद्ध नीतिशास्त्र एवं पंचशील सिद्धान्त का केन्द्रीय तत्व अहिंसा है। अहिंसा के अनुपालनार्थ सत्य, अचैर्य, ब्रम्हाचर्य और नशावर्जन इन पंचसूत्री "पंचशील" आचार की प्ररूपणा की गई है। पंचशीलों का मुख्य उददेश्य अहिंसा का अनुपालन ही है। अहिंसा का पालन आत्म विकास में बाधक कर्मों को रोकने के लिए तथा तदाधारित सत्यादि शीलों का परिपालन है। इसमें व्यक्ति तथा समाज के उत्थान के लिए असत्य का त्याग अनधिकृत वस्तु का अग्रहण तथा संयम का परिपालन– समाविष्ट है। इसके अभाव में अहिंसा का विकास नहीं हो सकता।

अहिंसा शब्द का शाब्दिक अर्थ हिंसा न करना है, किन्तु व्यापक रूप में अहिंसा का अर्थ है, समाज में बैर विरोध बढ़ाने वाली वृत्तियों के नियन्त्रण के लिए पंचशील सिद्धान्त का अनुशीलन किया जाये। जैसे– हिंसा मत करों, झूठ मत बोलो, चोरी मत करो, कुशील मत बनो, मद्यपान मत करो। इन निषेधात्मक नियमों से ही मनुष्य के आचरण का परिष्कार सरलतम नीति से किया जा सकता है।

इस प्रकार बौद्ध चिन्तन परम्परा में अहिंसा का अर्थ दो रूपों में है। प्रथम भावात्मक अर्थ में तथा द्वितीय हिंसात्मक वृत्तियों के निषेधात्मक अर्थ में निहित है। हिंसादि पांच पाप सामाजिक पाप है। अतः एक सभ्य, प्रगतिशल और सुखी समाज के लिए यह आवश्यक है कि हिंसात्मक वृत्तियों का परित्याग पूर्णता हो, तभी एक आदर्श समाज की रचना हो सकती है, बिना अहिंसात्मक वृत्ति के सभ्य समाज की रचना सम्भव नही।

बौद्ध चिन्तन परंपरा में पंचशीलों का अनुशीलन गृहस्थ एवं भिक्षु सभी के लिए माना गया है। गृहस्थ का जीवन 'त्याग और भोग' के बीच सन्तुलित जीवन का आचार मार्ग है। पंचशील सिद्धान्त का अनुकरण गृहस्थ के लिए नैतिक जीवन के क्रमिक विकस के साथ–साथ मानवीय गुणों का संचार करता है, लेकिन यही पंचशील सिद्धान्त का चरमोत्कर्ष भिक्षु के आध्यात्मिक जीवन में मिलता है। बुद्ध के अहिंसा सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में यह

स्पष्ट करना अत्यन्त प्रासंगिक है कि बुद्ध द्वारा हिंसा निषेध का मूल प्रयोजन क्या था? प्रस्तुत प्रश्न के विवेचन में सैद्धान्तिक पक्ष का निरूपण बौद्ध साहित्य में इस प्रकार किया गया है–

लोगों को यह चाहिए कि शरीर, मन से किसी भी प्राणी को कष्ट न पहुँचायें तथा वाणी से भी किसी को कटु वचन न बोलों। धम्मपद में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि "कटु वचन न बोलो बोलने पर (दुसरे भी वैसे ही) तुझे बोलेंगे, प्रतिवादी दुःखदायक होता है। "इस प्रकार एक दृष्टि से बुद्ध अहिंसा के अनुशीलन में " आत्मवत् सर्वभूतेषु" की भावना का आदर्श प्रस्तुत करते है– "जैसा मै हूँ, वैसे ही जगत् के अन्य सभी प्रणी है।" अतः अपने समान जगत् के सब प्राणियों को समझकर न स्यवं किसी का वध करें और न वध कराएँ अर्थात् सैद्धात्निक रूप से बुद्ध विचार अहिंसा के पालन में सर्वात्मभाव की भावना से ओतप्रोत है। सैद्धान्तिक पक्ष का तत्कालीन समाज में व्याप्त हिंसात्मक प्रवृत्ति को रोकने के लिए अत्यन्त उपयोगी था। बौद्ध चिन्तन में अहिंसा के व्यावहारिक पक्ष को इस रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है :–

बुद्धकालीन समाज में वैदिक संस्कृति की कर्मकाण्डी व्यापकता के कारण समाज धार्मिक जटिलता से ग्रस्त था। यज्ञों, धार्मिक अनुष्ठानों आदि में हिंसा का प्रचलन खुले आज हो गया था। एक प्रकार से धार्मिक अनुष्ठान बलिप्रथा के साथ ही पूरे होते थे। हिंसा का तो इतना बोलबाला था कि कुछ विशिष्ट अवसरों र पशुओं के अतिरिक्त मानवों की भी बलि चढ़ाई जाने लगी थी। पुरानी वैदिक परम्पराओं से समाज में अशान्ति व्यवस्था थी। सब श्रेणी के लोग अपने ऊपर आने वाली आपत्ति को टालने के लिए एवं मनौतियाँ पूरी होने के कारण देवताओं को बलि चढ़ाते थे। बलि में सैंकडों गायें, सुअर, बैल, बकरा आदि मारे जाते थे। बुद्ध ने यज्ञों में प्रचलित हिंसा का निषेध किया है।

बुद्ध द्वारा जो हिंसा निषेध किया गया है उसमें भूरिदत्त जातक का यह प्रसंग महत्वपूर्ण है कि "यदि हत्या करने वाला स्वर्ग जाता है और जिसकी हत्या होती है तो यह भी स्वर्ग जाता है, तो फिर ब्राम्हणों को भी ब्राम्हणों की हत्या कर देनी चाहिए यह हिंसा रूपी अधर्म पुराने समय से चला आ रहा है। "पुरोहित निर्दोष गायों की हत्या करते है और धर्म से भ्रष्ट होते है। इस प्रकार यह नीच कर्म पुराने है और जानकारों द्वारा निन्दित है लोग जहाँ भी इस प्रकार के पुरोहितों को देखते है, उसकी निन्दा करते है। यज्ञों में हिंसात्मक वृत्ति का निषेध करते हुए बुद्ध कहते है कि "जैसे कि माता–पिता, भाई या अन्य भाई बन्धु है, वैसे ही गौवें हमारी परम मित्र है।" ये अन्न, बल, पूर्ण (रूप) तथा सुख देने वाली है । "बुद्ध द्वारा पशु हिंसा के विरोध के प्रसंग में विद्वान ब्राम्हण तथा कूटदत्त का संवाद विशेष उल्लेखनीय है कि कूटदत्त बिम्बसार राजा का सम्मानित पुरोहित था। उसके यज्ञ की तैयारी में "700 बैल, 700 बछडे, 700 बछिया, 700 बकरियाँ, 700 भेंडें यज्ञ के लिए यूप (खम्भे) पर ला रखे थे। "इसी समय बुद्ध विचरते हुए खाणुमत गाँव में पहुँचे, कूटदत्त ने भी दर्शन करने के लिए बुद्ध के पास आकर यज्ञ के बारे में पूछा। बुद्ध ने उसे पौराणिक महाविजित राजा और उसके पुरोहित की कथा सुनाकर बतलाया कि उसने भी यज्ञ किए थे। उसने पहले दस सदाचारों का पालन किया था। फिर भी किसी को भी जरा भी कष्ट न देकर यज्ञ किया। उस यज्ञ में गायें नहीं मारी गई, बकरी, भेडे. नही मारे गये, मुर्गे, सुअर नहीं मारे गए।"हे गौतम मैं 700 बैलों, 700 बछडों 700 बछियों 700 बकरों, 700 भेड़ों के छुडवा देता हूँ, जीवन दानदेता हूँ। "वह हरी घास खातें ठन्डा पानी पीवें।

इस प्रकार बुद्ध के अहिंसा सिद्धान्त में व्यावहारिकता थी। इसीलिए उनके अहिंसामय उपदेश इतने प्रभावित होते थे कि वे मनुष्यों के हिंसात्मक ह्रदय को सदय–ह्रदय की भावना में बदल देते थे।

सामाजिक एवं वैयक्तिक जीवन में बुद्ध ने अंहिसा का पालन प्रत्येक गृहस्थ एवं भिक्षु के लिए आवश्यक माना है। अहिंसा सिद्धान्त उनके पंचशील सिद्धान्त में प्रमुख सिद्धान्त है। पंचशील सिद्धान्त में प्रयुक्त अहिंसा का आशय है कि ऐसा कोई कार्य न किया जाए जिससे किसी दूसरे व्यक्ति को हानि कष्ट न हो। इसलिए बुद्ध ने अहिंसा के पालन में क्रोध या बैर भाव का त्याग आवश्यक माना है क्योंकि क्रोध एवं वैर भाव का प्रतिफल हिंसात्मक होता है। बुद्ध के अहिंसा सिद्धान्त का सम्यक् पालन शान्त मन से ही किया जा सकता है। शान्त मन के लिए यह आवश्यक है कि " अक्रोध से क्रोध को जीते। इस प्रकार क्रोध के पूर्णतया त्याग से ही अहिंसा का पालन किया जा सकता है।

भगवान बुद्ध का अहिंसा सिद्धान्त एक व्यापक सिद्धान्त था। उनके अहिंसा सिद्धान्त में शरीर, मन, वाणी का नियन्त्रण एवं वैयक्तिक, सामाजिक तथा धार्मिक कल्याण का बृहत् रूप मिलता है। बुद्ध के अहिंसा सिद्धान्त का प्रभाव ऐतिहासिक दृष्टि से देखें, तो सम्राट अशोक के जीवन पर वैयक्तिक, सामाजिक एवं धार्मिक आदि सभी दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण रहा है। सम्राट अशोक ने तो कलिंग के युद्ध के बाद बुद्ध के अहिंसा

सिद्धान्त से प्रभावित होकर अपना सम्पूर्ण जीवन दर्शन अहिंसामय ही बना लिया। वर्तमान मे गाँधी जी बुद्ध के अहिंसा सिद्धान्त से प्रभावित हुए एवं अहिंसा के अस्त्र से ही देश को स्वतंत्रता प्रदान करायी।

इस प्रकार उपरोक्त अहिंसा सिद्धान्त के विवेचन से स्पष्ट है कि बुद्ध के अहिंसा सिद्धान्त में सार्वभौम रू^ से मनुष्य एवं समस्त प्राणी जगत् के प्रति आत्मवत् व्यवहार का आदर्श सर्वोपरि है। वास्तव में बुद्ध का अहिंसा का सिद्धान्त वैयक्तिक कल्याण के साथ–साथ सामाजिक कल्याण में भी उपयोगी है।

2. सत्य (मृषावाद विरति)

सत्य एक सावभौम धर्म है। सत्य का आचरण या व्यवहार केवल तपस्वी के लिए ही नही, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपयोगी है। बौद्ध दर्शन में सत्य को आन्तरिक शुद्धता का साधन माना गया है। और यह कहा गया है कि "अधरों से जो भी शब्द उच्चारित हों, वे अक्षुब्ध, न्यायशील एवं विनयशील हो। जो भी सत्य का आचरण करता है, उसमें आस्था रखता है, उसके लिए सत्य एक महान शक्ति है। ऐसा बुद्ध का उपदेश भी है कि "सत्य हमारे रोगों का निवारण करता है और हमें सर्वनाश से बचाता है, सत्य हमें जीवन और मृत्यु में शक्ति प्रदान करता है।" सत्य साधुता की जीवन शक्ति है, ह आविनाशी और अपराजेय है, अपने मानस में सत्य का अनुसंधान करो, उसका सम्पूर्ण मानवता में प्रसार करो।" बुद्ध ने सत्य को मानवता के आदर्श के लिए उपयोगी माना है। उन्होने सत्य के आचरण पर बल देते हुए भिक्षुओं से कहा था कि "सत्य के आदर्श की प्रतिष्ठा करों, तुम उन आकर्षणों के सम्मुख झुकना नही, जो मनुष्य को सत्य पथ से विचलित कर देते हैं। जैसे सूर्य हर ऋतु में अपने मार्ग पर चलता है, कभी उससे विचलित नही होता, वैसे ही तुम सत्य सदाचार के सीधे मत को मत भूलना " सत्य के आचरण के लिए साधक को निम्नलिखित बातों का पालन करना चाहिए– "धर्म को ही कहें, अधर्म को नहीं, प्रिय वचन बोलें, अप्रिय नहीं। सत्य बोले, असत्य नही। " अर्थात् सत्य के मूल में यह पालन करना चाहिए कि "उसी बात को बोलें, जिससे न स्वयं कष्ट पायें और न ही दूसरे को ही दुःख हो।"

उपर्युक्त दृष्टिकोण से यह स्पष्ट है कि बौद्ध चिन्तन परम्परा में सत्य का आचरण दो रूपों में है। (1) निषेधात्मक रूप से झूठ न बोलना, (2) सकारात्मक रूप से सत्य बोलने का पालन करना है जिससे व्यक्ति तथा समाज दोनों का कल्याण हो। व्यक्ति तथा समाज दोनों में उपयोगिता की दृष्टि से सत्य सामाजिक जीवन की अपेक्षा वैयक्तिक जीवन में अधिक उपयोग है।

3. अचौर्य (अदत्तदान विरति) :–

अचौर्य का अर्थ दूसरे द्वारा दी गयी वस्तु को ग्रहण न करना है। बौद्ध दर्शन में इसे चोरी न करने के अर्थ में लिया गया है, चोरी शब्द में व्यापक अर्थ सन्निहित है, जिसके अन्तर्गत नापतौल की ठगी, रिश्वत लेना, लूटपाट करना, डकैती करना आदि सभी निन्दनीय कर्मों का समावेश है। सीमित अर्थ में चोरी का आशय किसी का धन चुरा लेना है।

चोरी एक प्रकार की सामाजिक हिंसा है, क्योंकि जिस व्यक्ति का धन चुराया जाता है, या जिसको उगा जाता है, उसको कष्ट होता है। इसलिए व्यक्ति को चाहिए कि किसी दूसरे की समझी जाने वाली वस्तु की न तो चोरी करें और न ही चुराने के लिए किसी दूसरे को अनुमति दे। सभी प्रकार की चोरी का निषेध करें। "सुन निपात" में कहा गया है कि "दूसरे की समझी जाने वाली किसी चीज का चुराना त्याग दे, न चुराए और न चुराने की अनुमति दे। क्योंकि जैसा समज होता है वैसी समाज के अनुसार भी होती है। चोरी समाज के विकास में बाधक। इसलिए बौद्ध दर्शन में सम्यक् आजीविका के लिए कहा किया है कि "जीविका के लिए कोई ऐसा व्यापार नहीं करना चाहिए जिसमें बुद्ध के उपदेशों के विरूद्ध कार्य करना पड़े। उसमें न धोखा होना चहिए और न शोषण और न उसमें प्रकार के अन्याय या नुकसान की गुंजाइश हो।

अतः यह स्पष्ट है कि जीवन सादा हो सकें, उतना ही जीवन को सादा बनाना चाहिए। जिन पर व्यापार या परिवार की जिम्मेदारियाँ हों, उन्हें भी सादगी से ही रहना चाहिए। इस प्रकार बौद्ध चिन्तन परम्परा में सम्यक् अजीविका का आचरण करते हुए चोरी का निषेध समाज कल्याण के लिए आवश्यक माना गया है।

4. ब्रम्हचार्य (काममिथ्याचार विरित)

ब्रम्हचर्य के पालन में व्यभिचार का त्याग पूर्णतः निहित है। ब्रम्हचार्य के पालन में इन्द्रियों पर संयम, खासतौर से गुप्त इन्द्रियों पर पूर्णतः नियन्त्रण आवश्यक है। इन्द्रियों पर नियन्त्रण करने की सर्वप्रथम भूमिका मन

की है। मन के नियन्त्रण से ही सभी इन्द्रियों पर नियन्त्रण किया जा सकता है। इन्द्रियों पर संयम न होने से व्यभिचार, अराजकता, बलात्कार को बढ़ावा मिलता है। अतः स्वहित एवं समाजहित के लिए मन, इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखते हुए ब्रम्हचर्य का पालन आवश्यक है। ब्रम्हचर्य का पालन ही काममिभ्याचार से विरति है।

अधिधर्म कोश में कामिथ्याचार को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया गया है "काम मिथ्याचार अगभ्य स्त्री के साथ संभोग है, यह चतुर्षिध है–

(1) अगम्यस्त्री, परिगृहीत माता, दुहिता, या मामी के साथ सम्भोग (2) अयोनिमार्ग से अपनी सस्त्री के साथ सम्भोग। (3) आयुक्त स्थान, खुला स्थान, या ब्राम्ह स्थान जहाँ ब्रम्हचर्य का अभ्यास करते हों (4) अकाल में जब– स्त्री गर्भिणी है, जब उसके शिशु की स्तन्योपभोग की अवस्था है। जब उसने उपवास का परिग्रह किया है।"

उपर्युक्त काममिथ्याचार से विरति अर्थात् (ब्रम्हचर्य) को मानव जीवन का एक नैतिक सद्‌गुण माना गया है। सद्‌गुण के रूप में ब्रम्हचर्य का पालन (काममिथ्याचार से विरति का अभ्यास) मन, इन्द्रिय के दृढतापूर्वक वियन्त्रण के साथ, व्यक्ति को करना चाहिए। नैतिक सद्‌गुण के अतिरिक्त बौद्ध चिन्तन परम्परा में ब्रम्हचर्य को मानव जीवन का आध्यात्मिक लक्ष्य मोक्ष (या निर्वाण) के रूप में भी स्वीकार किया गया है। अन्ततः यह कहा जा सकता है कि ब्रम्हचर्य का अनुशीलन गृहस्थ जीवन में दृढतापूर्वक करने से व्यक्ति के मन, मस्तिक एवं स्वास्थ्य का अच्छा विकास होता है। इस प्रकार होता है। इस प्रकार वैयक्तिक दृष्टिकोण से ब्रम्हचर्य का अनुशीलन उपयोगी होने के साथ समाज के लिए भी कल्याणकारी है।

5. आर्जव अर्थात् नशावर्जन (सुरामद्य मेरे या विरति)–

आर्जव का अर्थ मद्य निषेध अर्थात् नशा वर्जन है। बुध्द ने गृहस्थों तथा भिक्षुओं सबके लिए मद्य आवश्यक माना है, क्योकिं नशीली वस्तुओं के सेवन से मनुष्य के मन और शरीर का सन्तुलन बिगड़ जाता है। मनुष्य के मन और शरीर के सन्तुलन बिगड़ जाने से व्यक्ति अनैतिक कार्यो में प्रवृत्त होता है। श्रीकृष्णदत्त भटट् ने मद्यपान के सेवन के छः कुपरिणाम बताए है– 1. तत्काल धन की हानि 2. कलह का बढ़ना 3. रोगों का घर 4. बदनामी का कारण 5. लज्जा का नाश 6.बुध्दि को दुर्ब करना। इसी प्रकार पाल कारुस की बुध्द गाथा में यह बताया गया है। पहले तो अर्जव के अभाव में दुराचारी मनुष्य की पंचगुनी हानि होती है। दुसरी उसकी कुख्याति सब तरफ फैल जाती है, तीसरे ब्राहण,कुलीन गृहपति या श्रमण किसी के भी समाज में प्रवेश करते हुए, उसे लज्जा और घबराहट का अुनभव होता है, चौथे मरते समय वह चिन्ताओं से मरा होता है और अन्ततः मृत्यु के उपरान्त शरीर के विलयन पर उसका चित दुःखी अवस्था में रहता है।

बुध्द ने मद्य निषेध को व्यक्ति तथा समाज दोनों के लिए उपयोगी माना है। आर्जव का दृढ़तापूर्वक पालन करने से व्यक्ति श्रम से सम्पति को अर्जित करते हुए अपनी सुकीर्ति चारों ओर फैलाता है। वह ब्राहाण, भिक्षु या गृहपति सभी के समाज में आत्म विश्वास के साथ प्रवेश कर सकता है। मद्य निषेद्य सदाचार के पालन में सहायक है। सदाचार के अनुसरण से समाज कल्याण की आशा की जा सकती है। इस प्रकार नशावर्जन व्यक्ति तथा समाज दोनों के लिए हितकर है।

चार ब्रहा विहार :–

बौध्द दर्शन के अन्तर्गत वर्णित चार ब्रहा विहार (मैत्री,करुणा,मुदिता और उपेक्षा) का पालन समाज में रहकर ही किया जा सकता है। ब्रहा विहार का अत्यन्त महत्व है। (ब्रमाविहार शब्द को अर्थ है – चित्त की दिव्य अवस्था) संक्षेप में ब्रहा विहारों का नैतिक निरुपण निम्नलिखित रुप में प्रस्तुत किया जा सकता हैः–

1.मैत्री :–

मैत्री का सामान्य अर्थ सुहृदयता या मित्रत्व है। विस्तृत अर्थो में मैत्री का अर्थ उदारता है। मैत्री चार ब्रह विहारों की भावना में प्रधान अंग है। इसके गौण अंग समान रुप में करुणा तथा मुदिता है। करुणा तथा मुदिता का पालन मैत्री के उदय के बिना असम्भव है। इसी प्रकार मैत्री के अभाव में उपेक्षा भावना भी नहीं हो सकती। अतः यह कहा जा सकता है कि चारों ब्रहा विहारों में मैत्री भावना का स्थान सर्वोपरि है।

मैत्री भावना के अभ्यास के लिए बौध्द चिन्तन परम्परा में यह उल्लेख मिलता है कि मैं सुखी होउॅ,दुःख से मुक्त होउॅ , मैं वैमनस्य, पीड़ा और चिन्ता से मुक्त होकर सुखपूॅर्वक भावना का अभ्यास करना चाहिए। इसी

भावना का अभ्यास तब तक जारी रखना चाहिए,जब तक,सभी प्रकार की सीमाएँ टूटकर सभी लोगों के प्रति समता का भाव उत्पन्न न हो जायें, आगें सभी दिशाओं में सभी प्रणियों के प्रति मैत्री का अभ्यास करना चाहिए अर्थात् जगत् के सभी प्राणियों के प्रति उदारता, प्रेम की रक्षा करती है, उसी प्रकार प्राणिमात्र के प्रति असीम प्रेमभाव बढ़ावे।

सामाजिक दृष्टि से मैत्री भावना का अत्यन्त महत्व है, क्योंकि मैत्री भावना से ही पारस्परिक सम्बन्धों की रक्षा की जा सकती है तथा समस्त अनाचार, दुराचारों से भी बचा जा सकता है। "मैत्री भाव" सापेक्षता एवं सदाचार मूलक कर्मों के करने पर ही बल देती है। सदाचार मूलक कर्मों से ही समाज में सुख–शान्ति की व्यवस्था स्थापित की जा सकती है।

2. करूणा

करूणा बौद्ध वाड्मय में सर्वाधिक प्रभावशाली तत्व है। करूणा भावना में असीम अनुकम्पा होती है। असीम अनुकम्पा के कारण ही बुद्ध को 'करूणापूर्ति' कहा गया है। करूणा मूलतः सामाजिक मनोभाव है जिसमें अपने एवं पराये का कोई भेद नही रहता है। करूणा ब्रम्ह विहार के अभ्यास के लिए कहा गया है कि "दुःखित मनुष्य, पापी, सुखी, मनुष्य, प्रियजन, मध्यस्थ मनुष्य और यदि कोई दुश्मन हो तो उसके प्रति करूणा का अभ्यास करना चाहिए, अभ्यास करते समय यदि द्वेष चित्त उत्पन्न हो जाये, तो उक्त उपायों से दूर करना चाहिए तथा इस भावना को तब तक जारी रखना चाहिए जब तक कि सभी सीमाएँ टूटकर समता का भाव उत्पन्न न हो जाये। बुद्ध की करूणा भावना में समाज के प्रति अनुकम्पा तथा समता के आदर्श को स्थापित किया गया है। यही कारण है कि बुद्ध के व्यक्तित्व एवं ह्रदय में उनकी हत्या करने वाले देवदत्त के लिए भी उतनी ही करूणा थी, जितनी लुटेरे अंगुलिमाल के प्रति और अपने पुत्र राहुल के प्रति "थी। वस्तुतः बुद्ध के जीवन में करूणा का जीवन्त रूप स्पष्टतः परिलक्षित होता है।

3. मुदिता :–

मुदता का गुण प्रमुदित रहना है। इसे आन्तरिक प्रसन्नता भी कहा जाता है। मुदिता एक सहानुभूतिमूलक आनन्द है। यह दूसरों के प्रति प्रसन्नता का अनुभव कराती है। मुदिता भावना में द्वेष, ईर्ष्या आदि भावना का पूर्णतया अन्त हो जाता है। मुदिता भावना के अभ्यास के लिए डॉ. भिक्षु धर्मरत्न ने बताया है कि "सर्वप्रथम मुदिता भावना का अभ्यास सुखी साथी।

निष्कर्ष :–

यह कहा जा सकता है कि मैत्री, करूणा, मुदित, और उपेक्षा चारों "ब्रम्हा विवार की भावना में " मानव के समुदाय के राष्ट्र– के भेदों को मिटाकर एक सूत्र में प्रस्तुत किया गया है। इन ब्रम्हा बिहारों की भावना सामाजिक संदभाव के रूप में सार्वभामिक है जो मानव के नैतिक जीवन से सम्पृक्त है। इनके अनुसरण बन्धुत्व का नैतिक आर्दश बौद्ध चिन्तन परम्परा में स्थापित किया गया है। बुद्ध की करूणा के प्रवाह से गरीब, धनी, मूर्ख, रोगियों की सेवा, भूखों को भोजन, दिग्भ्रमिता को सदर्माग दिखाना, दुखियों के दुख का अन्त संग्राम के लिए सत्रद्धो को शान्त एवं दुःखी प्राणियों पर दय कर स्वयं एक रोगी भिक्षु की सेवा करते हुए, भिक्षुओं को यह उपदेश दिया था कि "भिक्षुओं जो कोई मेरी सेवा करना चाहे वह रूष्ट की सेवा करे इससे यह प्रगट होता है कि बुद्ध को करूणा दुःखी प्राणियों से दया भाव है, लेकिन मानव समाज में गरीबों के प्रति दया व्यक्त करने वालों की दया एवं बुद्ध की करूणा में बुनियादी अन्तर है।

सुझाव :–

1. दया से दूसरों के दुःखों को दूर करने का भाव रहता है जबकि करूणा में समभाव रहता है।
2. दयाभाव में अंहकार है। पुण्य प्राप्त करने की आकांक्षा है। लोक में प्रतिष्ठा चढ़े, ऐसीं आकांक्षा है एवं दयनीय पर उपकार करने का भाव है। जबकि करूणा सहज में सभी प्राणियों के प्रति होती है और यह संवेदना के मूल में करूणा आसीम रूप में रहती है।
3. बौद्धदर्शन के नैतिक एवं सेवाभावना महाबौद्ध (बुधित्व) का तब तक लाभ नही होता, जब तक अखिल विश्व को आत्मवत् करूणाभाव से उसकी सेवा न की जाये।

सुविचार :–

बुद्धिष्ट स्टडी बुद्धिष्ट अध्ययन की आवश्यकता है– शाँति के लिए, मेल मिलाप, दया करूणा एवं ब्रम्हचर्य का पालन युवा पीढ़ियों तथा विद्यार्थियों के जीवन में नैतिकज्ञान नैतिक शिक्षा अनिवार्य होती है– हमें इन्द्रियों को कन्ट्रोल करने की शिक्षा सद्व्यवहार सुविवेक एवं प्रतिष्ठित प्रतिभावान बनने के लिए संस्कार अनुशासन प्रिये एवं शाँतिप्रिय सन्देश ही आज की संगोष्ठी में साधु सन्यासी एवं गुरूपूर्णिमा तथा शरदपूर्णिमा एवं उदात्र भावना का व्यापक समूचें ब्रम्हमाण्ड का जीव समूह होता है।

"सत्यमेव जयते" आत्म विश्वास की द्वीप सदैव सदैव प्रज्वलित रहते है।

सुविचार कविता –

" सकारात्मक एवं नकारात्मक सन्देश से
श्रेष्ठता में कौन है, इसका चित्रण करते हुए
सदैव मनन चिन्तन सद्‌विवेक,
सुविवेकशील प्राणी
जिज्ञासु प्रेरित शील एवं सदैव
खोज रिसर्च को जीवित रखनी
अनिवार्य होगी नैतिकशिक्षा एवं सामाजिक
(सिद्धान्त सेवाभावना–मोह माया)
का त्याग मैं की भावना नही
जो अकेले चलता है क्या वह कुष्ठित
माइण्ड का होता है
नही वह उतना अधिक तपता है
जितना तपोगे उतना ही निखार होगी
महापुरूषों की प्रेरणा से अनमोल ज्ञान एवं
सकारात्मक विचार से हमें भी अज्ञानता
में एक द्वीपक बहुत है प्रेरणा के लिए
शाँति और सद्‌मार्ग के लिए
शाँति और सदृ मार्ग के लिए
एक बुद्धिष्ट ही सर्वश्रेष्ठ
है, शाँति और सदभावना के लिए
सदर सधन्यवाद आभारवन्दन
जय जोहर नमो बुद्धाये जय भीम
जय भारत जय संविधान....

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय दर्शन, डॉ. एन के देवराज पृष्ट–246
2. बौद्ध न्याय श्वेखत्सकी– अनु, डॉ0 रामकुमार राम पृ.338
3. बौद्ध दर्शन राहुल साँकृव्यापन–
4. भारतीय दर्शन शास्त्र, डॉ. धमेन्द्र शास्त्री पृ. 48
5. बुद्धिष्ट स्टडी का अध्ययन एवं पठन–पाठन तथा अखबार पेपर एवं प्रतियोगिता दर्पण अध्ययन
6. अरविन्द पब्लिकेशन अध्ययन करेन्ट सामान्य ज्ञान
7. रोनिमार्ण, दैनिक अखबार,
8. विकिपीडिया इन्टरनेट
9. बौद्ध न्याय, मूल लेखक श्वेखात्सकी अनु डॉ. रायुकुरार राय– बुक अध्ययन पृ 86